AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहास में कुषाण सिक्कों का महत्व

ORIGINAL ARTICLE

Author
सुमित कुमार
शोधार्थी
स्नातकोत्तर इतिहास विभाग
विनोबा भावे विश्वविद्यालय
हजारीबाग, भारत

शोध सार

कुषाणों के स्वर्ण दीनार का आकार और वजन लगभग रोमन स्वर्ण दीवार के समान है, तथा तांबे के सिक्कों का वजन मानक उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में शासन करने वाले राजाओं के पूर्ववर्ती स्वरूप से असंगत नहीं है। कुषाण काल में सोने के सिक्कों का वजन स्थिर बना रहा, यद्यपि सोने की गुणवत्ता में गिरावट आई। विमा कडफिसेस ने तीन मूल्यवर्गों में सोने के सिक्के जारी किए–डबल स्टेटर, स्टेटर और क्वार्टर स्टेटर। बाद के कुषाणों ने भी इन्हीं मूल्यवर्गों के सोने के सिक्के जारी किए। कुषाणों ने स्थानीय जरूरतों को पूरा करने के लिए तांबे की मुद्राओं का सीमित प्रचलन किया, जबकि सोने के सिक्के बड़े पैमाने के पर वाणिज्यिक लेनदेन के लिए थे। कुषाण शासकों ने अपने सिक्कों को अपने क्षेत्र की विशालता, विभिन्न राष्ट्रीयताओं के लोगों का समावेश, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के मद्देनजर आर्थिक दबाव और स्थानीय आवश्यकताओं जैसे अन्य कारकों को ध्यान में रखा गया होगा।

मुख्य शब्द

दीनार, स्टेटर, पुराण, कर्षापण, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, मुद्रा प्रणाली.

कुषाण साम्राज्य की विस्तृत राजनीतिक, प्रशासनिक और आर्थिक संभावनाएं इस उन्नत वाणिज्य और व्यापार को महत्वपूर्ण सुरक्षा देने की स्थिति में था। यद्यपि की कुटिर उद्योग और वाणिज्य दोनों की महत्ता बहुत बढ़ चुकी थी फिर भी भारतीय जीवन का आधार कृषि से जुड़ी हुई अर्थव्यवस्था बनी रही। दरअसल भारत की अर्थव्यवस्था उस समय भी कृषि पर ही आश्रित थी। कृषि क्षेत्र का उत्पादन भारत की आंतरिक जरूरतों को पूरी तरह से संतुष्ट करने की स्थिति में था, हालांकि उस समय के साहित्य में दुर्भिक्ष जैसी प्राकृतिक आपदाओं का अनेक वर्णन भी मिलता है, लेकिन साथ–साथ इनमें ऐसे आर्थिक संकटों से जुझने की कुषाण साम्राज्य की क्षमता भी प्रतिबिंबित होती है। मापतौल की विकसीत व्यवस्था और प्रचलित मुद्रा प्रणाली एक उन्नत अर्थव्यवस्था का संकेत देती है। विशेष रूप से रोमन स्वर्ण सिक्कों के बराबर कुषाण कालीन भारतीय सिक्कों की मांग विदेशी व्यापार में भारतीय साख का ज्ञान कराता है। कुषाण काल में भारत के आर्थिक जीवन के विभिन्न पक्षों को उस समय के प्रचुर रूप से उपलब्ध स्रोतों के आधार पर अध्ययन किया गया है। इस दृष्टि से पश्चिमी भारत के क्षत्रपों के रिकार्ड भी महत्वपूर्ण हैं। कुषाण शासकों के सोने और तांबे के सिक्के एक निश्चित मानक या मानकों के अनुसार ढाले जाते थे। पहले के पैटर्न और मॉडलों को ध्यान में रखा जाता था। कुषाणों के स्वर्ण दीनार का आकार और वजन लगभग रोमन स्वर्ण दीवार के समान है तथा तांबे के सिक्कों का वजन मानक उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में शासन करने वाले राजाओं के पूर्ववर्ती स्वरूप

से असंगत नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है, कि समय के साथ विभिन्न मूल्यवर्गों के मूल्य में कमीं आई। कुषाण काल में सोने के सिक्कों का वजन स्थिर बना रहा, यद्यपि सोने की गुणवत्ता में गिरावट आई। डेविड डब्ल्यू मैक–डोवाल,[1] और मैती[2] द्वारा कुषाण शासकों के सोने और तांबे के सिक्कों के वजन मानकों के एक हालिया अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है, कि बड़े कुषाणों के दीनार का वजन मानक वस्तुतः वही रहा, इसमें शुद्ध सोने का प्रतिशत थोड़ा लेकिन उत्तरोत्तर कम होता गया।

विमा कडफिसेस ने तीन मूल्यवर्गों में सोने के सिक्के जारी किए–डबल स्टेटर, स्टेटर और क्वार्टर स्टेटर।[3] बाद के कुषाणों ने भी इन्हीं मूल्यवर्गों के सोने के सिक्के जारी किए। असली समझे जाने वाले एकमात्र चांदी के सिक्कों में विमा कडफिसेस का एक सिक्का शामिल है, जिसे विल्सन ने देखा था और गार्डनर की सूची में उल्लेख किया गया है,[4] और हुविष्क के दो सिक्के हैं जिनका उल्लेख प्रो. नारायण ने किया है,[5] और उसी शासक का एक और सिक्का है, जिसका उल्लेख पहले श्री दार ने किया था।[6] चांदी के कुषाण सिक्कों के नियमित प्रकाशन के अभाव में, इस बिन्दु पर कुछ भी निश्चित कहना कठिन है। प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले तांबे के कुषाण सिक्के विभिन्न मूल्यवर्ग के हैं। ये केवल फारसी मानक के दिद्राचम नहीं है।[7] कुषाण सिक्कों के इन वजन मानकों के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है, कि निरंतरता वांछित थी, लेकिन वजन कम करने की प्रवृत्ति थी। तांबे के टेट्राड्राचम के वजन में कमी और सोने के दीनार के वास्तविक मूल्य में कमी के बीच भी असमानता है।[8] विमा कडफिसेस और वासुदेव के बीच टेट्राड्राचम का वजन तेजी से घटकर लगभग आधा रह गया, जबकि सोने के दीनार में कमी का प्रतिशत मुश्किल से 6 प्रतिशत से थोड़ा अधिक था। यह तांबे की कीमत में वृद्धि जैसे कुछ दबावों के कारण हो सकता है। हालांकि, कुषाणों ने स्थानीय जरूरतों को पूरा करने के लिए तांबे की मुद्राओं का सीमित प्रचलन किया, जबकि सोने के सिक्के बड़े पैमाने के पर वाणिज्यिक लेनदेन के लिए थे। कुषाण शासकों ने अपने सिक्कों को अपने पूर्ववर्तियों के मॉडल पर आधारित किया होगा– जिसमें उनके क्षेत्र की विशालता, विभिन्न राष्ट्रीयताओं के लोगों का समावेश, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के मद्देनजर आर्थिक दबाव और स्थानीय आवश्यकताओं जैसे अन्य कारकों को ध्यान में रखा गया होगा। ये भारत में उनके उत्तराधिकारियों के लिए भी मॉडल के रूप में काम करते थे, जो पहले के गुप्त शासक थे, जिनका मानक प्रकार खड़े राजा और वेदी के डिजाइन पर आधारित है।

शक संवत के 23वें वर्ष के मथुरा से प्राप्त एक अभिलेख में 550 पुराणों (स्वर्ण सिक्कों) के अनुदान की चर्चा है, जिसे संमिताकारों और शायद धमनिकाओं की दो श्रेणी संगठणों के द्वारा दिया गया था। अनुदान से यह अपेक्षित था, कि इनसे होने वाले मुनाफे के द्वारा प्रत्येक महीने में विभिन्न अतिथिशाला में 100 ब्राम्हणों को भोजन कराए जाए तथा गरीब एवं असहायों को भी भोजन कराए जाए। अनुदानकर्ता का उद्देश्य पवित्र और धार्मिक था। इन दो श्रेणियों के दिए जाने वाले विशाल अनुदान से पता चलता है, कि उन श्रेणियों की आर्थिक हैसियत क्या रही होगी।

उस समय के स्रोतों में मुख्य रूप से तीन प्रकार के सिक्कों का वर्णन मिलता है। दीनार, पुराण और कर्षापण। दिव्यावदान[9] और अवदान शतक[10] में दीनार का अधिक प्रचलन दिखलाया गया है। मथुरा के एक पुरालोख में 550 रजत पुराणों के अनुदान का उल्लेख है। यह उल्लेख महावस्तु में भी किया गया है।[11] लेकिन विम कडफिसेस के कुछ रजत सिक्कों को छोड कर (जो अभी ब्रिटिश संग्रहालय में संकलित है) कुषाणों के स्वर्ण एवं ताम्र सिक्कों का ही अधिकांश प्रचलन प्रमाण में आता है। मनु के अनुसार एक पुराण (चांदी का एक सिक्का) कौड़ियों के दस पण के बराबर माना जाता था।[12] तांबे के सिक्को को कर्षापण कहा जाता था।[14] लेकिन अवदान शतक में अधिकांशतः स्वर्ण पिट्टक की ही चर्चा की गई है। स्वर्ण पिट्टक और दीनार नाम के स्वर्ण सिक्कों का भेद स्पष्ट नहीं है।

कनिष्क के शासन के 28वें वर्ष में निर्गत मथुरा से प्राप्त एक पुरालेख का उल्लेख किया जा सकता है, जिसमें पुराणों रजत सिक्कों की एक बड़ी अक्षयनीवि (सम्बद्ध कार्य के लिए निर्मित एक स्थायी कोष) जिसे दो श्रेणी संगठनों के द्वारा संयुक्त रूप से उपलब्ध कराया गया था, जिसका उद्देश्य उसके लाभांश से ब्राम्हणों एवं निर्धनों के भोजन की व्यवस्था की जानी थी।[15] इन श्रेणी संगठनों के द्वारा आधुनिक काल के बैंको के समान ही आर्थिक गतिविधियां संपन्न की जा रही थी। इनके द्वारा नियत लाभांश पर व्यापारिक गतिविधियों के लिए पर्याप्त निवेश निधि उपलब्ध करायी जा रही थी।

कनिष्क संवत के 28वें वर्ष में निर्गत मथुरा से प्राप्त एक पुरालेख में यह कहा गया है, कि कई बार निजी एजेंसियों (अधिकरणों) को भी रजत सिक्कों को निर्गत करने का अधिकार था। दरअसल केवल निचले सिंधु क्षेत्र में कुषाणों के द्वारा निर्गत रजत सिक्कों का प्रचलन था। साम्राज्य के अन्य हिस्सों में चूंकि कुषाण सम्राटों के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्गत रजत सिक्के नहीं मिले हैं, इस आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि कुषाण साम्राज्य के अन्य हिस्सों में निजी अधिकरणों के द्वारा निर्गत रजत सिक्कों का ही प्रचार रहा होगा। विम कडफिसेस, कनिष्क, हुविष्क, वासुदेव सभी कुषाण शासकों ने प्रचुर मात्रा में स्वर्ण एवं ताम्र सिक्कों को निर्गत किया और जिनका प्रचलन संपूर्ण साम्राज्य में सामान्य रूप से लोकप्रिय था। इण्डो–ग्रीक, पार्थियाई या प्रारंभिक और परवर्ती कुषाणों के सिक्कों की तरह कुषाण सम्राटों के सिक्के केवल स्थानीय महत्व के नहीं थे। न केवल कुषाण साम्राज्य में बल्कि कुषाण साम्राज्य के बाहर भी विदेशी व्यापार में कुषाण सम्राटों के द्वारा जारी किए गए सिक्कों की स्वीकार्यता थी। इस दृष्टिकोण से कुषाणों के द्वारा भारत के प्रथम सिक्कों को जारी किया गया, जिनका अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप था। रोमन सिक्कों की तरह कुषाणों के द्वारा भी अपने सिक्कों को सम्राट के वैभव को बढ़ाने के लिए भी प्रयोग में लाया गया था। कुषाण साम्राज्य की शक्ति और आस्था उनके सिक्कों में प्रतिबिंबित होती है। कुषाणों के सिक्कों को भारतीय उपमहाद्वीप के बाहर मध्य एशिया और उससे भी परे सूदूर क्षेत्रों में पाया गया है। इनमें से कई प्राप्तियां कुषाण सिक्कों के ढ़ेर के रूप में मिला है।[16] कुषाणों के स्वर्ण सिक्के कुषाण साम्राज्य के बाहर भी निश्चित रूप से प्रयोग में लाए गए जो उनके स्वर्ण सिक्कों के अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य को प्रदर्शित करता है। लेकिन फिर भी कुषाण सिक्कों का रोमन सिक्कों की तरह अंतर्राष्ट्रीय बाजार में सर्वमान्य महत्व नहीं रहा होगा। यह अलग बात है, कि कुषाण काल में चूंकि रोमन स्वर्ण सिक्कों का भारत में व्यापक स्तर पर आगमन हुआ। इसी तथ्य पर कुषाणों को रोमन स्वर्ण सिक्कों के सादृश्य स्वर्ण सिक्के निर्गत करने की प्रेरणा मिली होगी। रोमन स्वर्ण सिक्के ऑरेई का जो स्वरूप रोमन सम्राट नीरो के काल में निर्धारित हुआ था, कुषाणों ने भी बिल्कुल इन्हीं मानकों पर अपने स्वर्ण सिक्के निर्गत किए। परवर्ती कुषाण सम्राटों के काल में स्वर्ण सिक्कों का यह मापदण्ड धीरे–धीरे घटने लगा क्योंकि उनके द्वारा जारी किए गए स्वर्ण सिक्कों में स्वर्ण के परिमाण में उत्तरोत्तर ह्रास हुआ। दूसरी ओर रोमन स्वर्ण सिक्कों का भी वजन यद्यपि कि नीरो के काल के बाद उत्तरोत्तर घटा किन्तु उसके बावजूद रोमन सिक्कों में स्वर्ण की शुद्धता मानक रूप से स्थापित रहीं इसलिए यह कहा जा सकता है, कि रोमन एवं कुषाण साम्राज्यों की मुद्रा नीति में मौलिक भिन्नता थी। इसलिए स्वर्ण सिक्कों के आंतरिक महत्व मूल्य के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कुषाण सिक्कों का उतना प्रमाणिक महत्व नहीं रही होगी जितना कि रोमन स्वर्ण सिक्कों का सतत रूप से विद्यमान रहा। वैसे भी भारतीय उपमहाद्वीप के बाहर रोमन साम्राज्य के उस पूर्वी क्षेत्र में अथवा मध्य एशिया ने जिन क्षेत्रों के साथ कुषाण कालीन व्यापार का प्रचलन था। उस संपूर्ण भू–भाग में कुषाणों के स्वर्ण सिक्के निश्चित रूप से विद्यमान थे। रोमन साम्राज्य के साथ हो रहे व्यापार में तथा उस क्रम में एशिया और अफ्रीका के जिन व्यापारिक केन्द्रों की भूमिका थी। उन क्षेत्रों के साथ कुषाण काल में किया जा रहा व्यापार का संतुलन भारत के पक्ष में था। इसलिए रोमन स्वर्ण सिक्कों का भारत में व्यापक आगमन कुषाणों के द्वारा अपने स्वर्ण सिक्कों के प्रचलन से कही अधिक मूल्य रखता था। कुषाणों के सिक्कों को भारतीय उपमहाद्वीप के बाहर मध्य एशिया और उससे भी परे सूदूर क्षेत्रों में पाया गया है इनमें से कई प्राप्तियां कुषाण सिक्कों के ढ़ेर के रूप में मिली है।[17]

निष्कर्ष

कुषाणों के स्वर्ण सिक्के कुषाण साम्राज्य के बाहर भी निश्चित रूप से प्रयोग में लाए गए जो उनके स्वर्ण सिक्कों के अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य को प्रदर्शित करता है। लेकिन फिर भी कुषाण सिक्कों का रोमन सिक्कों की तरह अंतर्राष्ट्रीय बाजार में सर्वमान्य महत्व नहीं रहा होगा। यह अलग बात है कि कुषाण काल में चूंकि रोमन स्वर्ण सिक्कों का भारत में व्यापक स्तर पर आगमन हुआ। इसी तथ्य पर कुषाणों को रोमन स्वर्ण सिक्कों के सादृश्य स्वर्ण सिक्के निर्गत करने की प्रेरणा मिली होगी। भारतीय उपमहाद्वीप के बाहर रोमन साम्राज्य के उस पूर्वी क्षेत्र में अथवा मध्य एशिया ने जिन क्षेत्रों के साथ कुषाण कालीन व्यापार का प्रचलन था। उस संपूर्ण भू–भाग में कुषाणों के स्वर्ण सिक्के निश्चित रूप से विद्यमान थे। चांदी के कुषाण सिक्कों के नियमित प्रकाशन के अभाव में, इस बिन्दु पर कुछ भी निश्चित

कहना कठिन है। कुषाण साम्राज्य के द्वारा उतने वृहत स्तर पर अपने स्वर्ण सिक्कों को निर्यात करने की आवश्यकता भी नहीं थी। फिर भी कुषाण साम्राज्य में पश्चिम के साथ यह व्यापार इतना फला–फूला की कुषाण सिक्कों को प्रतिष्ठा भी स्वाभाविक रूप से स्थापित हो गई। कुषाण सिक्कों का प्रचलन अर्शसिद साम्राज्य के क्षेत्रों में भी था जहां के शासकों ने स्थाई रूप से अपनी मुद्रा प्रणाली का विकास करना आवश्यक नहीं समझा। इन क्षेत्रों में कुषाण सिक्कों का प्रचलन भी निश्चित रूप से कुषाण सिक्कों के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के महत्व के कारण ही रहा होगा। कुषाण सम्राटों के अधीन वाणिज्य एवं व्यापार के लिए जो राजनीतिक स्थायित्व एवं सुरक्षा विद्यमान थी उसके कारण कुषाण सिक्कों का बहुत अधिक महत्व रहा होगा।

संदर्भ सूची

1. त्रिवेदी, एच. वी. एण्ड नारायण, ए. के. (सम्पादक), बाय डेविड डब्ल्यू. मैकडोवेल (1960) दि वेट स्टैंडर्डस ऑफ दि गोल्ड एण्ड कॉपर क्वाइनेज ऑफ दि कुषाणा डायनेस्टी फ्रॉम विमा कडफिसेज टू वासुदेवा, *दि जर्नल ऑफ न्यूमिस्मेटिक सोसायटी ऑफ इंडिया, वोल्यूम–xxii,* पृ. 63–74।
2. एवान्स, जे.; हेड, वार्कले वी.; गुएबर, हरबर्ट ए. एण्ड रैपसन, ई. जे. (सम्पादक), बाय जॉर्ज मैकडोनाल्ड (1898) दि लिजेंट आयटन ऑन क्वायंस ऑफ हीमेरा, *दि न्यूमिस्मेटिक क्रोनिकल एण्ड जर्नल ऑफ दि न्यूमिस्मेटिक सोसायटी,* बिरनार्ड पब्लिशिंग, लंदन, पृ. 185–192।
3. पुरी, बी. एन. (1965) *इंडिया अंडर दि कुषाणाज,* भारतीय विद्या भवन, मुम्बई, पृ. 220।
4. उपरोक्त।
5. त्रिवेदी, एच. वी. एण्ड नारायण, ए. के. (सम्पादक), बाय डेविड डब्ल्यू. मैकडोवेल (1960) दि वेट स्टैंडर्डस ऑफ दि गोल्ड एण्ड कॉपर क्वाइनेज ऑफ दि कुषाणा डायनेस्टी फ्रॉम विमा कडफिसेज टू वासुदेवा, *दि जर्नल ऑफ न्यूमिस्मेटिक सोसायटी ऑफ इंडिया, वोल्यूम–xxii,* पृ. 99।
6. पुरी, बी. एन. (1965) *इंडिया अंडर दि कुषाणाज,* भारतीय विद्या भवन, मुम्बई, पृ. 220।
7. उपरोक्त।
8. त्रिवेदी, एच. वी. एण्ड नारायण, ए. के. (सम्पादक), बाय डेविड डब्ल्यू. मैकडोवेल (1960) दि वेट स्टैंडर्डस ऑफ दि गोल्ड एण्ड कॉपर क्वाइनेज ऑफ दि कुषाणा डायनेस्टी फ्रॉम विमा कडफिसेज टू वासुदेवा, *दि जर्नल ऑफ न्यूमिस्मेटिक सोसायटी ऑफ इंडिया, वोल्यूम–xxii,* पृ. 73।
9. कॉवेल, ई. की. एण्ड नील, आर. ए. (सम्पादक) (1836) *दि दिव्यावदाना, ए कलेक्शन ऑफ अर्ली बुद्धिस्ट लिजेंड,* यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रीज, पृ. 427।
10. मुखर्जी, बी. एन. (1970) *दि इकॉनोमिक फैक्टर्स इन कुषाणा हिस्ट्री,* पिलग्रिम पब्लिकेशन, कलकत्ता, पृ. 50।
11. शास्त्री, हीरानंद (सम्पादक), स्टेन कोनोव, (1931) मथुरा ब्राह्मी इन्स्क्रीप्शन ऑफ दि इयर 28, *एपिग्राफिया इंडिका,* वोल्यूम XXI, इश्यु क्रमांक 10, मैनेजर ऑफ पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ. 55।
12. हुल्टज, ई. (सम्पादक), ई. सेनार्ट, (1905) दि इन्स्क्रीप्शन इन दि केम्स एट नाशिक, *एपिग्राफिया इंडिका,* वोल्यूम VIII, इश्यु क्रमांक 08, सुपेरिटेन्डेन्ट ऑफ गवर्नमेंट, प्रिंटिंग, मुम्बई, पृ. 136।
13. कॉवेल, ई. की. एण्ड नील, आर. ए. (सम्पादक) (1836) *दि दिव्यावदाना, ए कलेक्शन ऑफ अर्ली बुद्धिस्ट लिजेंड,* यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रीज, पृ. 428।
14. शास्त्री, हीरानंद (सम्पादक), स्टेन कोनोव, (1931) मथुरा ब्राह्मी इन्स्क्रीप्शन ऑफ दि इयर 28, *एपिग्राफिया इंडिका,* वोल्यूम XXI, इश्यु क्रमांक 10, मैनेजर ऑफ पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ. 55।
15. बाशम, ए. एल. (सम्पादक), (1968) *पेपर्स ऑन दि डेट ऑफ कनिष्क,* ई. जे. ब्रील, लियडेन, पृ. 311।
16. बाशम, ए. एल. (सम्पादक), (1968) *पेपर्स ऑन दि डेट ऑफ कनिष्क,* ई. जे. ब्रील, लियडेन, पृ. 311।
17. व्हीलर, मार्टिमर (1954) *रोम बियोंड दि इंपेरियल फ्रंटियर,* जी. ए. बेल एण्ड सन्स लि., लंदन, पृ. 169–170।

––==00==––